Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881; IMPACT FACTOR :8.017(2023); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer Reviewed and Refereed Journal: VOLUME:12, ISSUE:2(3), February: 2023
Online Copy of Article Publication Available (2023 Issues)
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: 2nd February 2023
Publication Date:10th March 2023
Publisher: Sucharitha Publication, India
Digital Certificate of Publication: www.ijmer.in/pdf/e-CertificateofPublication-IJMER.pdf

DOI: http://ijmer.in.doi./2023/12.02.65
www.ijmer.in

समकालीन हिन्दी साहित्य और मूल्यबोध

डॉ.बाबूलाल बैरवा

सह आचार्य – हिन्दी

स्व.पं.न.कि.श. राजकीय महाविद्यालय,दौसा (राज.)

भारत को विश्व गुरु बनाने में साहित्यकारों की भी बड़ी भूमिका रही साहित्य, समाज और मूल्यबोध परस्पर अन्तः सम्बन्धित है। साहित्यकार के साहित्य के माध्यम से समाज को प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से मूल्यबोध की शिक्षा देते रहे हैं एवं दे रहे हैं, जिससे समाज के अंतर्गत मानव– सभ्यता में निखार आता है। विज्ञापन की दुनिया में साहित्य की दिशा और दशा बदलती है, साहित्य मनुष्य का चरित्र निर्माण करता है और कविता अपने रचना विधान में ही लोकतांत्रिक होती है। वह कल्याणकरी मूल्यों की प्रतिष्ठा करती है। राजनीति गरीबों का शोषण करती है। लोकतंत्र जब खतरे में आता है, तब साहित्य अपना दायित्व निभाता है। उत्तर आधुनिक समाज मूल्यों की चिंता नहीं करता। मूल्य मनुष्यता के साथ चलते चले आ रहे हैं। हर युग की अपनी माँग और समस्याएँ होती है। साहित्य समाज से पैदा होता है और वह समाज के लिए होता है। साहित्य और मूल्य समाज की उत्पाद हैं। समाज की पहचान ठोस इकाईयों के रूप में होती है, मनुष्य प्रकृति का अंग है। परिवर्तनशीलता मूल्यबोध का स्थायी गुण है। साहित्य सापेक्ष सत्ता है किंतु आज के साहित्यकारों की चिंता व्यक्तिगत है। आज का साहित्यकार अनुवाद के माध्यम से अपनी वैश्विक पहचान बनाना चाहता है, मूल्यों की चिंता अब उसे कम हो गयी है। धर्म दर्शन के माध्यम से प्रत्येक युग में मूल्यों पर चर्चा की जाती रही है। संघर्ष होता रहा है।

साहित्यकारों ने मूल्य के तीन बिंदु बताए– अर्थतंत्र, सत्ता और पुरोहित वर्ग। श्रमिक जातियाँ हमेशा उपेक्षित रहीं, किन्तु यही सबको गति देती रहीं हैं। मूल्य यहीं बनते बिगड़ते हैं। सब कुछ परिवर्तनशील है, सब कुछ नश्वर है, मूल्य भी उसी में है। समय के प्रवाह में मूल्य बदलते रहते हैं। पुराने मूल्यों को समाप्त करके नये मूल्यों– समता, स्वतन्त्रता और विश्ववन्धुत्व की रचना की जा सकती है।

जीवन, साहित्य और समाज – ये तीनों तत्त्व परस्पर अन्तरंग रूप से जुड़े हुए हैं। जीवन की सुख–दुःखभरी नाना अनुभूतियों को लेकर साहित्य में श्रृंगार, हास्य, करुण आदि नव रसों की अवतारणा की गयी है। साहित्य–शास्त्रियों ने अपनी अपनी रचनाओं में जीवन का तात्त्विक विश्लेषण किया है। साहित्य जब जीवन–धर्मी होता है, तब पाठक और श्रोता के हृदय को विशेष रूप से स्पर्श करता है। काव्य–कविता हो, उपन्यास हो,नाटक हो, कथा हो या अन्य कुछ साहित्यिक रचना हो, हर क्षेत्र में ध्यान देने का विषय है सामाजिक मूल्यबोध। साहित्यिक कृतियों में रचनात्मक तत्त्व यदि सकारात्मक रूप में गर्भित हो, तो समाज पर अनुकूल और स्वस्थ प्रभाव अनुभूत होता है। सारस्वत साधकगण होते हैं समाज के दिग्दर्शक एवं असीम–शक्तिशाली व्यक्ति। कुपथ में चलनेवालों को उसी से निवृत्त करके सत्पथ में आगे बढ़ने के लिये उत्साह और प्रेरणा देना लेखक का धर्म है। प्राणि–जगत् में मंगलकारक तत्त्व–समूह जीवनधर्मी चिन्तन का परिप्रकाश करता है। भारतीय साहित्य में 'उत्तिष्ठत, जाग्रत, प्राप्य वरान् निबोधत', 'असतो मा सद् गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा अमृतं गमय' इत्यादि उपनिषदीय वाणी मनुष्य–जीवन को संयत एवं शान्तिमय बनाने में सहायता करती है।

विधाता की सृष्टि में सारे विश्व में धर्म–अधर्म, सत्य–मिथ्या, सुख–दुःख, आलोक–अन्धकार, भलाई–बुराई, मिलन–विच्छेद और जन्म–मरण आदि कई विरोधी तत्त्व हमेशा परस्पर संघर्ष–रत रहते हैं। मनुष्य के जीवन में धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष – ये चार पुरुषार्थ होते हैं। हर साहित्य में मनुष्य की धर्मशास्त्रीय संहिता या आचरण–पद्धति लिपिबद्ध होती रहती है। सत्कर्मों के फल अच्छे और दुष्कर्मों के फल बुरे होते हैं। ये बातें सर्वत्र भूरि–भूरि प्रतिपादित हुई हैं। इस चिरन्तन चिन्तन–धारा का प्रतिफलन समग्र विश्व–साहित्यों में परिलक्षित होता है। लोक–शिक्षा की दृष्टि से सामाजिक अंगीकार–बद्ध लेखक अपनी रचना में मानव तथा अन्य प्राणियों के जीवन में घटित अच्छाई और बुराई – दोनों दिशाओं का विवेचन करता है। आदिकवि वाल्मीकि–प्रणीत

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881; IMPACT FACTOR :8.017(2023); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer Reviewed and Refereed Journal: VOLUME:12, ISSUE:2(3), February: 2023
Online Copy of Article Publication Available (2023 Issues)
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: 2nd February 2023
Publication Date:10th March 2023
Publisher: Sucharitha Publication, India
Digital Certificate of Publication: www.ijmer.in/pdf/e-CertificateofPublication-IJMER.pdf

DOI: http://ijmer.in.doi./2023/12.02.65
www.ijmer.in

रामायण हो, महामुनि व्यास–कृत महाभारत हो या आधुनिक युग का जो कुछ भी साहित्य हो, सबमें जीवन के कुछ संघर्ष और सफलता का विवरण उपलब्ध होता है।

महाभारत में खलनायक शकुनि और दुर्योधन आदि कौरव पक्ष के बहुसंख्यक वीर योद्धा थे । परन्तु अन्त में पाण्डवों की विजय हुई है। असत्य, अन्याय और अधर्म के विरुद्ध संग्राम करके सत्य, न्याय एवं धर्म को प्रतिष्ठित करने में सफल और विजयी हुए हैं पाण्डव। इसलिये उस महाभारत ग्रन्थ का सार–मर्म है जहाँ धर्म है, वहाँ है विजय। यथार्थ में महाभारत के रचयिता वेदव्यास हैं मानव–जीवन के श्रेष्ठ व्याख्याकार। सामाजिक दृष्टि से जीवन में केवल बाह्य संघर्ष नहीं, आभ्यन्तर संघर्ष भी चलता रहता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि दुर्गुण मनुष्य को लक्ष्य–भ्रष्ट करके अधोगति की ओर खींच लेते हैं। अच्छाई और बुराई का भेद विचार करके सन्मार्ग में प्रवृत्त होने के लिये समाज को प्रेरणा देती है मूल्यबोध–सम्पन्न साहित्यिक रचना। इसी दृष्टि से साहित्य–सर्जनाकार की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। नकारात्मक और विनाशात्मक चिन्तन से मनुष्य भली राह से भटक जाता है और अपने लक्ष्य से दूर चला जाता है। इसी कारण साहित्य में आवश्यक हैं सकारात्मक तत्त्व एवं विश्वजनीन उपादेयता।

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। काव्य–जगत् का सर्जक है क्रान्तदर्शी कवि। अपनी रुचि के अनुसार लेखनी चला कर वह विश्व में परिवर्त्तन ला सकता है – साहित्यकार। ऐसी शक्ति है कवि–लेखक के पास। साहित्यकार होते हैं सत्य–शिव–सुन्दर के उपासक, रूपकार एवं उद्‌गाता। जीवन को सरस सुन्दर और मधुमय करना साहित्यकार का कर्म है। फलस्वरूप साहित्य–जगत् के प्रति उसकी देन सार्वकालिक और अमर हो जाती है।

साहित्य, संस्कृति, कला, विज्ञान, वाणिज्य आदि हर विधा की प्रगति देश में जरूरी है। देश का बाह्य कलेवर होता है सभ्यता और अन्तरात्मा है संस्कृति। कला, साहित्य एवं संगीत का आदर सामाजिक जीवन को ऊँचे स्तर पर पहुँचाता है। केवल बाह्य शरीर की स्वच्छता नहीं, आत्मा की भी परिष्कृति और निर्मलता चाहिये। साहित्य में संस्कृति का उपर्युक्त समावेश लेखकीय विशेषत्व होता है।

हमारे समाज में प्रतिभा की कमी नहीं है। जरूरत है प्रतिभा के विकास के लिये उपर्युक्त समय, सुयोग एवं परिवेश की। चारित्रिक उत्कर्ष शिक्षा का प्रधान लक्ष्य और जीवन–चर्या का अत्यन्त आवश्यक तत्त्व है। आज के विज्ञान–युग में मनुष्य असाध्य साधन करने में समर्थ है। परन्तु मानसिक एवं मानविक दृष्टि से वह प्रगति के बदले अधोगति की ओर चल पड़ा है। भौतिक और यान्त्रिक शक्ति से उन्मत्त होकर आज का मनुष्य केवल स्वार्थी बन गया है। वह स्वयं मनुष्य–जाति एवं प्रकृति पर अकथनीय अत्याचार करने लगा है। इसके परिणाम–स्वरूप सामाजिक और प्राकृतिक पर्यावरण प्रदूषित और विपर्यस्त हो गया है। सारा सन्तुलन बिगड़ गया है। भस्मासुर की भाँति मनुष्य के औद्धत्यभरे आचरणों से प्रतिक्रिया–स्वरूप सुनामी, कोरोना जैसे प्राकृतिक विपर्ययों की घटना आश्चर्यजनक नहीं है। प्रकृति की गोद में पले हुए मनुष्य को प्रकृति की सुरक्षा हेतु यत्नवान् होना चाहिये। साहित्य–साधक महामनीषियों ने वैदिक युग से ही प्रकृति और मनुष्य के बीच अन्तरंग आत्मिक संबन्ध का सुन्दर वर्णन किया है।

वर्तमान के कम्प्युटर–युग में सारा विश्व एक परिवार–सा बन गया है। महापुरुषों की 'वसुधैव कुटुम्बकम'– भावना साकार होने लगी है। इसी परिवेश में समाज और मातृभूमि के उत्कर्ष हेतु साहित्यकारों के युगानुरूप रचनात्मक अवदान सर्वथा स्वागतयोग्य एवं अपेक्षित हैं। प्रतिभाशाली व्यक्तिगण विविध क्षेत्रों में कृतित्व अर्जन करके देश के गौरव बढ़ायें। कलम और कदम साथ – साथ आगे चलें। विश्व–नीड़ में मानवता का सौरभ वितरण करना जीवन का ध्येय बने। विश्वबन्धुता, मैत्री, प्रेम और शान्ति की पावन धारा सभी के हृदय को रसाप्लुत एवं आनन्दमय करे।

साहित्य और समाज दोनों ही एक–दूसरे के पूरक माने जाते हैं। साहित्य समाज के मानसिक तथा सांस्कृतिक उन्नति और सभ्यता के विकास का साक्षी है। ज्ञान राशि के संचित कोष को साहित्य कहा जाता है। साहित्य एक ओर जहां समाज को प्रभावित करता है वहीं दूसरी ओर वह समाज से प्रभावित भी होता है। साहित्य शब्द की उत्पत्ति दो शब्दों से मिलकर हुई है पहला शब्द है 'स' जिसका मतलब होता है साथ–साथ। जबकि दूसरा शब्द है 'हित' अर्थात कल्याण। इस तरह से साहित्य का अभिप्राय ऐसी लिखित सामग्री से है जिसके प्रत्येक शब्द और प्रत्येक अर्थ में लोक हित की भावना समाई रहती है। प्रत्येक

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881; IMPACT FACTOR :8.017(2023); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer Reviewed and Refereed Journal: VOLUME:12, ISSUE:2(3), February: 2023
Online Copy of Article Publication Available (2023 Issues)
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: 2nd February 2023
Publication Date:10th March 2023
Publisher: Sucharitha Publication, India
Digital Certificate of Publication: www.ijmer.in/pdf/e-CertificateofPublication-IJMER.pdf

DOI: http://ijmer.in.doi./2023/12.02.65
www.ijmer.in

युग का साहित्य अपने युग के प्रगतिशील विचारों द्वारा किसी न किसी रूप में अवश्य प्रभावित होता है। साहित्य हमारी कौतूहल और जिज्ञासा वृत्तियों और ज्ञान की पिपासा को तृप्त करता है और क्षुधापूर्ति करता है।

साहित्य से ही किसी राष्ट्र का इतिहास, गरिमा, संस्कृति और सभ्यता, वहां के पूर्वजों के विचारों एवं अनुसंधानों, प्राचीन रीति रिवाजों, रहन–सहन तथा परंपराओं आदि की जानकारी प्राप्त होती है। साहित्य ही समाज का आईना होता है। किस देश में कौन सी भाषा बोली जाती है, उस देश में किस प्रकार की वेशभूषा प्रचलित है, वहां के लोगों कैसा रहन सहन है तथा लोगों के सामाजिक और धार्मिक विचार कैसे हैं आदि बातों का पता साहित्य के अध्ययन से चल जाता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में 'साहित्य सामाजिक मंगल का विद्यालय है यह सत्य है कि व्यक्ति विशेष की प्रतिभा से ही साहित्य रचित होता है किंतु और भी अधिक सत्य यह है कि प्रतिभा सामाजिक प्रगति की ही उपज है।'

साहित्यकार को समाज का छायाकार या चित्रकार भी कहा जाता है क्योंकि साहित्यकार अपनी कृति को समाज में चल रही मान्यताओं और परंपराओं के वर्णन द्वारा ही सजाता है इसलिए साहित्य और समाज में अन्यायोश्रित संबंध प्रत्येक देश के साहित्य में देखने को मिल जाता है। कबीर ने अपने समय के आडंबरों, सामाजिक कुरीतियों और मान्यताओं के विरोध में अपनी आवाज उठाई। ठीक इसी तरह प्रेमचंद ने अपनी कहानियों और उपन्यासों में किसी न किसी समस्या के प्रति संवेदना जताई है। कोई भी साहित्यकार चाहे कितना भी अपने को समाज से अलग रखना चाहे लेकिन वह ऐसा नहीं कर पाता है।

गोस्वामी तुलसीदास जी का अमर काव्य आज अज्ञान में भटकते हुए असंख्य भारतीयों का आकाशदीप की भाँति पथ–प्रदर्शन कर रहा है। कालिदास का अमर काव्य भी आज के शासकों के समक्ष रघुवंशियों के लोकप्रिय शासन का आदर्श उपस्थित करता है। आज भारतवर्ष युगों युगों से अचल हिमालय की भांति अडिग खड़ा है, जबकि प्रभंजन और झँझावात आए और चले गए। यदि आज हमारे पास चिर–समृद्ध साहित्य ना होता तो ना जाने हम कहां होते और होते भी या नहीं, कुछ कहा नहीं जा सकता था।

साहित्यकार समाज का प्राण होता है। समाज में रहकर समाज की रीति–नीति, धर्म–कर्म और व्यवहार वातावरण से ही अपनी रचना के लिए प्रेरणा ग्रहण करता है और लोक भावना का प्रतिनिधित्व करता है। अतः समाज की जैसी भावनाएं और विचार होंगे वैसा ही तत्कालीन साहित्य भी होगा। इस प्रकार सामाजिक गतिविधियों तथा समाज में चल रही परंपराओं से समाज का साहित्य अवश्य ही प्रभावित होता है। साहित्यकार समाज का एक जागरूक प्राणी होता है। वह समाज के सभी पहेलूओं को बड़ी गंभीरता के साथ देता है और उन पर विचार करता है फिर उन्हें अपने साहित्य में उतारता है।

साहित्य समाज से भाव सामग्री और प्रेरणा ग्रहण करता है तो वह समाज को दिशाबोध देकर अपने दायित्व का भी पूर्णतः अनुभव करता है। साहित्य उदासीनता का राग नहीं सुनता, वह तो कायरों और पराभव प्रेमियों को ललकारता हुआ एक बार उन्हें भी समर भूमि में उतरने के लिए बुलावा देता है। इसलिए महावीर प्रसाद ने साहित्य की शक्ति को तोप, तलवार, तीर और बम के गोलों से भी बढ़कर स्वीकार किया है। बिहारी के एक दोहे से–

नहिं पराग नहीं मधुर मधु, नहिं विकास इहिं काल।

अली कली ही सौं बंध्यो, आगे कौन हवाल।।

राजा जयसिंह को अपने कर्तव्य का ज्ञान हो गया और उसके जीवन में बदलाव आ गया। भूषण की वीर भावों से ओतप्रोत ओजस्वी कविता से मराठों को नव शक्ति प्राप्त हुई। इतना ही नहीं स्वतंत्रता–संग्राम के दिनों में माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्राकुमारी चौहान जैसे कई कवियों ने अपनी ओजपूर्ण कविताओं से न जाने कितने युवा प्राणों में देशभक्ति की भावना भर दी।

तात्पर्य यह है कि समाज के विचारों, भावनाओं और परिस्थितियों का प्रभाव साहित्यकार और उसके साहित्य पर निश्चित रूप से पड़ता है। अतः साहित्य समाज का दर्पण होना स्वाभाविक ही है। साहित्य अपने समाज का प्रतिबिंब है, वह समाज के विकास का मुखर सहोदर है।

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881; IMPACT FACTOR :8.017(2023); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer Reviewed and Refereed Journal: VOLUME:12, ISSUE:2(3), February: 2023
Online Copy of Article Publication Available (2023 Issues)
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: 2nd February 2023
Publication Date:10th March 2023
Publisher: Sucharitha Publication, India
Digital Certificate of Publication: www.ijmer.in/pdf/e-CertificateofPublication-IJMER.pdf

DOI: http://ijmer.in.doi./2023/12.02.65
www.ijmer.in

जैसे–जैसे समय बदल रहा है वैसे–वैसे सामाजिक मूल्यों में गिरावट आ रही है। अर्थ केन्द्रित सामाजिक व्यवस्था में नैतिकता का धीरे–धीरे पतन होता जा रहा है। व्यक्ति विशेष के लिए भौतिक सुखों को भोगना ही सबसे महत्वपूर्ण हो गया है। आदमी पूरी तरह से आत्मकेन्द्रित हो गया है। नैतिकता और आदर्श उसे सिर्फ तब याद आता है जब वह खुद घोर परेशानी हो, अन्यथा मौका मिलने पर हर व्यक्ति अपनी यथा स्थिति को सामने रख ही देता है।

आदमी के अंदर का खोखलापन, उसका दोहरा चरित्र, उसकी संवेदनाओं में गिरावट और भौतिकता की अंधी दौड़ में समस्त मानवीय मूल्यों में बिखराव समाज की सबसे बड़ी विडंबना है। साहित्य के माध्यम से समाज में व्याप्त मोहभंग, परिस्थितिमय व्यावहारिक जटिलता, आंतरिक घृणा और कुंठा, आधुनिक जीवन शैली से परंपराओं का संघर्ष और ऐसे ही कई अन्य संदर्भो के माध्यम से सामाजिक जीवन में हो रहे नैतिक पतन, संबंधों के बदलते अर्थ आधुनिक जीवन की निराशा, और कुंठाओं को बखूबी चित्रित करते हैं। साथ ही साथ हिन्दी साहित्य जगत के कई ऐसे पात्र भी हैं जिनका नैतिक स्तर, ऊँचा आदर्श और जीवन संबंधी उनकी दृष्टि प्रतिकूल परिस्थितियों में भी टूटने या बिखरने के लिए बिलकुल भी तैयार नहीं है। ऐसे पात्र अपनी नैतिक और सामाजिक दायित्वों के प्रति सजग हैं। इस तरह दोनों ही तरह की स्थितियाँ हिन्दी कथा साहित्य में मिलती हैं। पर टूटते और बिखरते हुए जीवन मूल्यों से संबंधित चित्रण अधिक है।

जीवन के साथ जुडा शब्द है 'मूल्य'। चिंतन के क्षेत्र में तो इस शब्द का प्रयोग हमेशा होता है। व्यावहारिक रुप में भी इस शब्द का प्रयोग होता है। आदर्श और मूल्य में भी सूक्ष्मतम फर्क है। व्यावहारिक मूल्य शब्द 'मापन की कसौटी' के तौर पर प्रयोग किया जाता है, पर यहां 'मूल्य' यानी संपूर्ण मानवी व्यवहार से सम्बंधित है। 'मूल्य' शब्द गौरवता को दर्शाता है। इसे ही अंग्रेजी में value कहां जाता है। संस्कृत के आधार पर 'मूलेन समोमूल्य' कह सकते है। अर्थपरिवर्तन के कारण इस शब्द में बड़ी व्यापकता पाई जाती है। संक्षेप में गुणों को मूल्य कह सकते हैं। ऐसी कोई भी वस्तु मूल्य हो सकती है जो जीवन को आगे बढाती है और सुरक्षित करती है। मूल्य दैनिक जीवन में व्यवहार को नियंत्रित करने के सामान्य सिद्धांत है। मूल्य केवल मानव व्यवहार की दिषा निर्धारण ही नहीं करते, बल्कि अपने आप में आदर्श और उद्देश्य भी होते हैं।

हमारा साहित्य भले वो किसी भी भाषा में हो उसमें मूल्यों के दर्शन होते हैं। साहित्य और मूल्यों का अटूट रिश्ता है। साहित्य में प्राचीन काल से ही मूल्यों का विवरण हम देखते हैं। प्राचीन काल के साहित्य में हमें भगवान श्रीकृष्ण या आदर्शोन्मुखी राम का गुण वर्णन दिखाई देता है। इन रुपों द्वारा आदर्श व्यक्तित्व में धैर्य, नीति, बुद्धि, वाक्चतुर्यता आदि 'शाश्वत' मूल्य दर्शाये गये हैं।

मूल्यों का हमेशा आदर होना चाहिए, मूल्यों की रक्षा करणा ही मनुष्यता का मुख्य धर्म है। जीवन में सौदर्य की स्थापना करनी हो तो उसमें मूल्यों का होना अति आवश्यक है। मनुष्य ने अपना भौतिक विकास तो बहुत कर लिया है साथ उसे जीवन मूल्यों की भी उतनी ही आवश्यकता होती है। मूल्य तो हमेशा परिवर्तित होते आए हैं। आज मूल्यों का निर्माण स्वयं आदमी खुद अपने लिए कर रहा है। पर ऐसे भी मूल्य है जो चिरंतन शाश्वत रहे हैं।

साहित्य की हर विधा में अपनी–अपनी शैली के अनुसार मूल्यों को प्रतिष्ठित किया गया है। समय की मांग के अनुसार इन मूल्यों में परिवर्तन दिखाई देता है। कहानी साहित्य की एक सशक्त विधा मानी जाती है। कहानी विधा से हमें जीवन पथ पर चलने के लिए आदर्श एवं मूल्य मिलते हैं। नयी कहानी और मूल्यों के संदर्भ में डॉ. इंद्रनाथ मदान ने लिखा है – ''पहले कहानी अधिकांशतः कल्पना पर आधारित होती थी अब यथार्थ को लेकर चलती है। अतः पहले की कहानी पुरानी है और आज की कहानी नयी है। नयी कहानी में तलाश पात्रों की नहीं यथार्थ की है, पात्रों के माध्यम से यथार्थ की अभिव्यक्ति् की। पहले कहानी कला मूल्यों को लेकर लिखी जाती थी, अब जीवन मूल्यों को लेकर।''

अगर हम कहानी साहित्य विधा का विचार करते हैं तो आरम्भिक कहानियां आदर्शपरक या कल्पनापरक होती थी पर धीरे धीरे इसमें जीवन मूल्यों की स्पष्ट अभिव्यक्ति होती गई। स्वतंत्रता पूर्व कहानी में त्याग, निःस्वार्थता, बलिदान आदि भावनाएं विकसित की गई थी। प्रेमचंद कालीन कहानी में यथार्थ को दर्शाने का प्रयास किया गया । यानी यथार्थता के माध्यम से जीवन की विसंगतीयां, कुरुपता को दर्शाने का प्रयास किया गया।

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881; IMPACT FACTOR :8.017(2023); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer Reviewed and Refereed Journal: VOLUME:12, ISSUE:2(3), February: 2023
Online Copy of Article Publication Available (2023 Issues)
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: 2nd February 2023
Publication Date:10th March 2023
Publisher: Sucharitha Publication, India
Digital Certificate of Publication: www.ijmer.in/pdf/e-CertificateofPublication-IJMER.pdf

DOI: http://ijmer.in.doi./2023/12.02.65
www.ijmer.in

जयशंकर प्रसाद ने अपनी कहानियों में 'आकाश दीप', 'ममता', 'पुकार', रिश्तों की उलझनें ही दर्शायी है। चंद्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था' कहानी में विशुद्ध प्रेम और श्रद्धा भाव दर्शाया गया है। प्रेमचंद तो हमेशा से ही मूल्यों के आग्रही दिखाई देते है। उनकी 'परीक्षा', 'नमक का दरोगा', 'पंच परमेश्वर' में आदर्श का ही चित्रण है। विश्वंभर नाथ शर्मा की 'ताई' में पारिवारिक मूल्यों को दिखाया गया है। यशपाल जी की 'महादान' कहानी में मूल्यों का विघटन किस प्रकार हो रहा है उसे दर्शाया है। 'दुख का अधिकार' इस कहानी में सामाजिक, आर्थिक विषमता को दिखाया है। अज्ञेय ने 'इंदे की बेटी' कहानी में दांपत्य संबंधों में छेद दिखाया है। मोहन राकेश की 'मलबे का आदमी' में परिस्थिति के अनुरुप मूल्यों में हो रही गिरावट देख सकते हैं। कमलेश्वर जी के 'मांस का दरिया', 'कस्बे का आदमी', 'बयान' आदी कहानियों में आदर्श का आग्रह दिखाई देता है। मंन्नू भंडारी की कहानियों में पारिवारिक टूटते मूल्य, पुराने और नये मूल्यों में हो रहा संघर्ष दिखाई देता है।

आज नैतिक मूल्यों में विघटन हो गया है। अनेक कहानियों में यौन संबंधों को दर्शाया गया है। जो वर्णन यौन संबंधों का मिलता है वह अधिक मात्रा में और खुलकर किया गया है। साथ ही इस काल में स्वार्थ प्रवृत्ती अधिक दिखाई गई है। मन्नू जी की 'उंचाई', यादवेंद्र शर्मा की 'नारी और पत्नी', केशव दुबे की 'काच का घर', शैलेश मटियानी की 'भय' इन कहानियों में यौन संबंधों का उन्मुक्त विवरण पाया जाता है। नैतिक मूल्यों के साथ आर्थिक मूल्यों में भी विघटन होता गया। 'अर्थ' को ज्यादा महत्व दिया गया। इसी से भ्रष्टाचार, गरीबी, महंगाई बढी है। मंजुल भगत की 'पाव रोटी और कटलेट्स', दिप्ती खंडेवाल की 'बेहया' जितेंद्र भाटिया की 'शहाजदनामा' कहानियों में आर्थिक विषमता को देखा सकता हैं। शिवानी की 'स्वयं सिद्धा', मेहरुनिसा परवेज की 'गिरवी रखी धूप' , चित्रा मुद्गल की 'अग्निरेखा' आदि कहानियों में सामाजिक मूल्यों का विघटन देखा जा सकता है।

अयोध्यासिंह उपाध्याय जी का उपन्यास 'अधखिला फूल' में धार्मिक अंधविश्वास का दुष्परिणाम देख सकते हैं। प्रेमचंद और उनके बाद के उपन्यासों में चरित्रात्मकता और उद्देश्यता दिखाई देती है। प्रेमचंद तो युगप्रवर्तक उपन्यासकार माने जाते हैं। प्रेमचंद ने कृषकों की समस्याओं को उठाया है। प्रेमचंद के उपन्यासों द्वारा व्यक्त समस्याएँ सामाजिक और विश्वव्यापी है। 'गोदान' एक सर्वश्रेष्ठ कृति है। प्रेमचंद के बाद जैनेंद्र, अज्ञेय, और इलाचंद जोशी आदि लेखकों ने कुंठाओं, सेक्स आदि का चित्रण किया है। यशपाल , रांगेय राघव आदि ने मार्क्सवाद के प्रभाव में होने के कारण समाजवादी विचारधारा का प्रचार एवं प्रसार अपने उपन्यासों द्वारा किया है। साठोत्तर काल में तो महिला लेखन ने उपन्यासों में अपनी अलग पहचान निर्माण की । उनके उपन्यासों द्वारा विभिन्न मूल्यों को दर्शाया है। इस काल में परिवार टूटते नजर आये हैं। अनुशासनहीनता, बेरोजगारी, महंगाई नजर आती है। कृष्णा सोबती के 'डार से बिछुड़ी', 'मित्रो मरजानी,' 'सूरजमुखी अंधेरे के', उपन्यासों में सेक्स का अधिकतर चित्रण, पुरातन मूल्यों को नकारती औरते दिखाई देती हैं। उषा प्रियंवदा जी ने 'रुकोगी नहीं राधिका' में प्यार, और प्यार न मिलने के कारण राधिका को मिलने वाला तनाव दर्शाया है। शशिप्रभा शास्त्री के 'वीरान रास्ते और झरना' , नावें, 'सीढियॉ', आदि उपन्यासों में नारी मन की दुःख, वेदना का वर्णन मिलता है। वीरान रास्ते और झरना में अवैध यौन संबंधों दिखाई देते हैं।

मन्नू भंडारी के 'आपका बंटी', 'एक इच मुस्कान', 'महाभोज', 'स्वामी' आदि उपन्यासों मे प्रेम, राजनैतिक परिवेश, अलगाव, विश्वास आदि मूल्यों को व्यक्त करते हैं। मालती जोशी जी के 'ज्वालामुखी के संदर्भ में', 'पाषाण युग', 'निष्कासन', 'सहमें हुए प्रश्न' आदि उपन्यासों में एकाकीपन, आधुनिकता का परिवेश और उसके दुष्परिणाम दिखाई देते हैं। दीप्ति खंडेलवाल के 'प्रिया', 'वह तिसरा', 'कोहरे' तो मृदुला गर्ग के 'चितकोबरा' , 'उसके हिस्से की धूप' , 'वंशज' आदि में प्रेम की नई भावनाएं, स्नेह, कुछ उपन्यासों में क्रांतिकारी वृत्ति भी है।

कविता एक ऐसी विधा है जिसमें कम शब्दों में हम ज्यादा बात कह सकते हैं। हर कविता में कोई न कोई मूल्य मिलता ही है। सुनीता जैन की एक कविता है 'बदल सको तो बदलो' उसमें कुछ पंक्तियॉ इस प्रकार है –

''हम दोनों

एक दूसरे को

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881; IMPACT FACTOR :8.017(2023); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer Reviewed and Refereed Journal: VOLUME:12, ISSUE:2(3), February: 2023
Online Copy of Article Publication Available (2023 Issues)
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: 2nd February 2023
Publication Date:10th March 2023
Publisher: Sucharitha Publication, India
Digital Certificate of Publication: www.ijmer.in/pdf/e-CertificateofPublication-IJMER.pdf

DOI: http://ijmer.in.doi./2023/12.02.65
www.ijmer.in

घायल करते रह सकते थे

नाखनों से

चकू पैंन से ..

जल से अधिक

आंसू में तैरानी है।''

अन्त में निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि समाज में मूल्यों की जो स्थितियां है वहीं हम साहित्य में देखते हैं। बस किसी ने कहानी के माध्यम से तो किसी ने कविता या उपन्यास के माध्यम से व्यक्त किया है। इस प्रकार मूल्यों में आदर्शता, यथार्थता, विघटन, मूल्यों में गिरावट आयी है। इस विघटन का मुख्य कारण है पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, बढती आबादी। अब हमे मदारी की भाषा छोड़ना होगा। आत्मावलोकन करना होगा। साहित्य के दोहरा चरित्र, क्रीतदास को समझना होगा। लिखते कुछ हैं, बोलते कुछ हैं, पढ़ते कुछ हैं को त्यागना होगा, तब मूल्यबोध स्थापित होगा। समस्त विमर्शों को एक साथ ले कर चलेंगे, तभी नये मूल्यों की स्थापना होगी। भारतीय संस्कृति एवं परम्परा में मूल्य 'सत्यं शिवं सुन्दरम' के रूप में विद्यमान है। जो 'जियो और जीने दो' , 'वसुधैव कुटुम्बकम' और 'सबसे बड़ा सत्य मनुष्य है उसके ऊपर कुछ नहीं' में विश्वास रखती है। मूल्य भी स्थायी नही होते तो मूल्यबोध कैसे स्थाई होगें। यही समझना है तो सभ्यता के विकास में जाना होगा।

संदर्भ सूची :–

1. रामविलास शर्मा : भारतीय नवजागरण और यूरोप, दिल्ली विश्वविद्यालय, सं.1996
2. धर्मवीर भारती, मानव मूल्य और साहित्य, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, सं.1999
3. श्यामचरण दूबे, भारतीय समाज, अनुवाद– वंदना मिश्र, नेशनल बुक ट्रस्ट, दिल्ली, सं.2011
4. सं.मूलचंद गौतम : भारत की सांस्कृतिक एकता, भारतीय साहित्य, दिल्ली, सं.2009
5. नंद किशोर आचार्य : परम्परा और परिवर्तन, कविता प्रकाशन, बीकानेर, सं.1995
6. रामस्वरूप चतुर्वेदी : हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, इलाहाबाद, सं.2001
7. बच्चन सिंह : आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द,वाणी प्रकाशन, दिल्ली, सं.2016